हिंदी की उन्नति पर व्याख्यान*

रचना काल-सन् १८७७

अहो अहो मम प्रान प्रिय आर्य भ्रातृ-गन आज ।
धन्य दिवस जो यह जुट्यो हिन्दी हेतु समाज ।१
तामें आदर अति दिये मोहिं तुम निज जन जान ।
जो बुलवायो मोहिं इत दर्शन हित सन्मान ।२
जदपि न मैं जानत कछु सब बिधि सों अति दीन ।
तदपि भ्रात निज जानिकै सबन कृपा अति कीन ।३
भारत में यह देस धनि जहाँ मिलत सब भ्रात ।
निज भाषा हित कट कसे हम कहँ आज लखात ।४
निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल ।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल ।५
पढ़े संस्कृत जतन करि पंडित भे विख्यात ।
पै निज भाषा ज्ञान बिन कहि न सकत एक बात ।६
पढ़े फारसी बहुत बिध तौहू भये खराब ।
पानी खटिया तर रहो पूत मरे बकि आब ।७
अंग्रेजी पढ़ि के जदपि सब गुन होत प्रवीन ।
पै निज भाषा ज्ञान बिन रहत हीन के हीन ।८
यह सब भाषा काम की जब लौं बाहर बास ।
घर भीतर नहिं कर सकत इन सों बुद्धि प्रकास ।९
नारि पुत्र नहिं समझहीं कछु इन भाषन माहिं ।
तासों इन भाषन सों काम चलत कछु नाहिं ।१०
उन्नति पूरी है तबहि जब घर उन्नति होय ।
निज सरीर उन्नति किए रहत मूढ़ सब लोय ।११
पिता बिबिध भाषा पढ़े पुत्र न जानत एक ।
तासों दोउन मध्य में रहत प्रेम अविवेक ।१२
अँग्रेजी निज नारि को कोउ न सकत पढ़ाइ ।
नारि पढ़े बिन एक हू काज न चलत लखाइ ।१३
गुरु सिखवत बहु भाँति लौं जदपि बालकन ज्ञान ।
पै माता-शिक्षा सरिस, होत तौन नहिं ज्ञान ।१४
जब अति कोमल जिय रहत तब बालक तुतरात ।
भूलत नहिं सो बात जो तबै सिखाई जात ।१५
भूलि जात बहु बात जो जोबन सीखत लोय ।
पै भूलत नहिं बालकन सीख्यो सुनो जो होय ।१६
जिमि ले काँची मृत्तिका सब कछु सकत बनाय ।
पै न पकाए पर चलत तामें कछु उपाय ।१७
काँचे पर ता सों बनत जो कछु सो रह जात ।
चिन्ह सदा तिमि बाल सिसु शिक्षा नाहिं भुलात ।१८
सो सिसु-शिक्षा मातु-बस जो करि पुत्रहि प्यार ।
खान-पान खेलन समय सकत सिखाय बिचार ।१९
लाल पुत्र करि चूमि मुख बिबिध प्रकार खेलाइ ।
माता सब कछु पुत्र को सहजहिं सकत दिखाइ ।२०
सो माता हिंदी बिना कछु नहिं जानत और ।
तासों निज भाषा अहै, सबही की सिरमौर ।२१
पढ़ो लिखो कोउ लाख बिध भाषा बहुत प्रकार ।
पै जबही कछु सोचिहो निज भाषा अनुसार ।२२
सुत सों तिय सों मीत सों भृत्यन सों दिन रात ।
जो भाषा मधि कीजिये निज मन की बहु बात ।२३
ता की उन्नति के किये सब बिधि मिटत कलेस ।
जामैं सहजहि देसको इन सब को उपदेश ।२४
जदपि बाहर के जनन गुन सों देत रिझाय ।
पै निज घर के लोग कहँ सकत नाहिं समझाय ।२५
बाहर तो अति चतुर बनि कीनो जगत प्रबंध ।
पै घर को व्यवहार सब रहत अंध को अंध ।२६
कै पहिने पतलून कै भये मौलबी खास ।
पै तिय सके रिझाय नहिं जो गृहस्थ सुख बास ।२७
इनकी सो अति चतुरता तिनको नाहिं सुहात ।
ताही सों प्राचीन कवि कही भली यह बात ।२८
खसम जो पूजै देहरा भूत-पूजनी जोय ।
एकै घर में दो मता कुसल कहाँ से होय ।२९
तासों जब सब होहिं घर बिद्या-बुद्धि-निधान ।
होइ सकत उन्नति तबै और उपाय न आन ।३०
निज भाषा उन्नति बिना कबहुँ न ह्वै है सोय ।
लाख अनेक उपाय यों भले करो किन कोय ।३१
इक भाषा, इक जीव इक मति सब घर के लोग ।
तबै बनत है सबन सों मिटत मूढ़ता सोग ।३२
और एक अति लाभ यह यामैं प्रगट लखात ।
निज भाषा में कीजिये जो विद्या की बात ।३३
तेहि सुनि पावै लाभ सब बात सुनु जो कोय ।
यह गुन भाषा और महँ कबहूँ नाहीं कोय ।३४

* हिंदी भाषा के परमाचार्य श्रीयुत बाबू हरिश्चन्द्र का लेकचर, जिसे बाबू साहब ने जून मास (जेष्ठ सं. १९३४) की हिंदीवर्द्धिनी सभा में पढ़ा था । (हिंदी प्रदीप खं. १ सं. १-२, काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा "हिंदी भाषा" नाम से प्रकाशित ।

Scanned with CamScanner

लखहु न अँगरेजन करी उन्नति भाषा माँहिं ।
सब विद्या के ग्रंथ अंगरेजिन माँह लखाहिं ।३५
सब्द बहुत परदेस के उच्चार हु न ठीक ।
लिखत कछू पढ़ि जात कछु सब बिधि परम अलीक ।३६
पै निज भाषा जानि तेहि तजत नहीं अंगरेज ।
दिन दिन याही को करत उन्नति पै अति तेज ।३७
बिबिध कला शिक्षा अमित ज्ञान अनेक प्रकार ।
सब देसन से लै करहु भाषा माँहिं प्रचार ।३८
जहाँ जौन को गुन लह्यो लियो जहाँ सो तौन ।
ताहीं सों अंगरेज अब सब बिद्या के भौन ।३९
पढ़ि बिदेस भाषा लहत सकल बुद्धि को स्वाद ।
पै कृतकृत्य न होत ये बिन कछु करि अनुवाद ।४०
तुलसी कृत रामायनहु पढ़त जबै चित लाय ।
तब ताको आसय लिखत भाषा माँहिं बनाय ।४१
तासों सबहीं भाँति है इनकी उन्नति आज ।
एकहि भाषा महँ अहै जिनकी सकल समाज ।४२
धर्म जुद्ध विद्या कला गीत काव्य अरु ज्ञान ।
सबके समझन जोग है भाषा माँहि समान ।४३
भारत में सब भिन्न अति ताही सों उत्पात ।
बिबिध देस मतहू बिबिध भाषा बिबिध लखात ।४४
सौंप्यौ ब्राह्मन को धरम तेइ जानत वेद ।
तासों निज मत को लह्या कोऊ कबहुँ न भेद ।४५
तिन जो भाष्यो सोइ कियो अनुचित जदपि लखात ।
सपनहुँ नहिं जानी कछू अपने मत की बात ।४६
पढ़े संस्कृत बहुत बिध अंग्रेजी हू आप ।
भाषा चतुर नहीं भये हिय को मिट्यो न ताप ।४७
तिमि जग शिष्टाचार सब मौलवियन आधीन ।
तन सों सीखे बिनु रहत भये दीन के दीन ।४८
बैठनि बोलनि उठनि पुनि हँसनि मिलनि बतरान ।
बिन पारसी न आवही यह जिय निश्चय जान ।४९
तिमि जग की विद्या सकल अंगरेजी आधीन ।
सबै जानि ताके बिना रहै दीन के दीन ।५०
करत बहुत बिधि चतुरई तऊ न कछू लखात ।
नहिं कछु जानत तार में खबर कौन बिधि जाता ।५१
रेल चलत केहि भाँति सों कल है काको नाँव ।
तोप चलावत किमि सबै जारि सकल जो गाँव ।५२
वस्त्र बनत केहि भाँति सों कागज केहि बिधि होत ।
काहि कबाइद कहत हैं बाँधत किमि जल-सोत ।५३
उतरत फोटोग्राफ किमि छिन मँह छाया रूप ।
होय मनुष्यहि क्यों भये हम गुलाम ये भूप ।५४
यह सब अंगरेजी पढ़े बिनु नहिं जान्यो जात ।
तासों याको भेद नहिं साधारनहि लखात ।५५
बिना पढ़े अब या समै चलै न कोउ बिधि काज ।
दिन दिन छीजत जात है या सों आर्य्य समाज ।५६
कल के कल बल छलन सों छले इते के लोग ।
नित नित घन सों घटत हैं बाढ़त है दुख सोग ।५७
मारकीन मलमल बिना चलत कछू नहिं काम ।
परदेसी जुलहान कै मानहु भये गुलाम ।५८
वस्त्र काँच कागज कलम चित्र खिलौने आदि ।
आवत सब परदेस सों नितहि जहाजन लादि ।५९
इत की रुई सींग अरु चरमहि तित लै जाय ।
ताहि स्वच्छ करि वस्तु बहु भेजत इतहि बनाय ।६०
तिनही को हम पाइकै साजत निज आमोद ।
तिन बिन छिन तृन सकल सुख, स्वाद बिनोद प्रमोद ।६१
कछु तो बेतन में गयो कछुक राज-कर माँहि ।
बाकी सब व्यौहार में गयो रह्यौ कछु नाहिं ।६२
निरधन दिन दिन होत है भारत भुव सब भाँति ।
ताहि बचाइ न कोउ सकत निज भुज बुद्धि-बल काँति ।६३
यह सब कला अधीन है तामें इतै न ग्रन्थ ।
तासों सूझत नाहिं कछु द्रब्य बचावन पंथ ।६४
अंगरेजी पहिले पढ़ै पुनि बिलायतहि जाय ।
या विद्या को भेद सब तो कछु ताहि लखाय ।६५
सो तो केवल पढ़न में गई जवानी बीति ।
तब आगे का करि सकत होइ बिरध गहि नीति ।६६
तैसहि भोगत दण्ड बहु बिनु जाने कानून ।
सहत पुलिस की ताड़ना देत एक करि दून ।६७
पे सब विद्या की कहूँ होइ जु पै अनुवाद ।
निज भाषा महँ तो सबै याको लहै सवाद ।६८
जानि सकैं सब कछु सबहि बिबिध कला के भेद ।
बनै बस्तु कल की इतै मिटै दीनता भेद ।६९
राजनीति समझैं सकल पावहिं तत्व बिचार ।
पहिचानैं निज धरम को जानैं शिष्टाचार ।७०
दूजे के नहिं बस रहैं सीखैं बिबिध विबेक ।
होइ मुक्त दोउ जगत के भोगैं भोग अनेक ।७१
तासो सब मिलि छाँड़ि कै दूजे और उपाय ।
उन्नति भाषा की करहु अहो भ्रात गन आय ।७२
बच्च्यौ तनिकहू समय नहिं तासों करहु न देर ।
औसर चूके ब्यर्थ की सोच करहुगे फेर ।७३
प्रचलित करहु जहान में निज भाषा करि जत्न ।
राज-काज दरबार में फैलावहु यह रत्न ।७४
भाषा सोधहु आपनी होइ सबै एकत्र ।
पढ़हु पढ़ावहु लिखहु मिलि छपवावहु कछु पत्र ।७५
बैर बिरोधहि छोड़ि कै एक जीव सब होय ।
करहु जतन उद्धार को मिलि भाई सब कोय ।७६

Scanned with CamScanner

आलहा बिरहहु को भयो अंगरेजी अनुवाद ।
यह लखि लाज न आवई तुमहिं न होत बिखाद ॥७७
अंगरेजी अरु फारसी अरबी संस्कृति ढेर ।
खुले खज़ाने तिनहिं क्यों लूटत लावहु देर ॥७८
सबको सार निकाल कै पुस्तक रचहु बनाइ ।
छोटी बड़ी अनेक बिध बिबिध बिषय की लाइ ॥७९
मेटहु तम अज्ञान को सुखी होहु सब कोय ।
बाल बृद्ध नर नारि सब बिद्या संजुत होय ॥८०
फूट बैर को दूरि करि बाँधि कमर मजबूत ।
भारत माता के बनो भ्राता पूत सपूत ॥८१
देव पितर सबही दुखी कष्टित भारत माय ।
दीन दसा निज सुतन की तिनसों लखी न जाय ॥८२
कब लौं दुख सहिहौ सबै रहिहौ बने गुलाम ।
पाइ मूढ़ कालो अरध-सिक्षित काफिर नाम । ८३
बिना एक जिय के भये चलिहै अब नहिं काम ।
तासों कोरो ज्ञान तजि उठहु छोड़ि बिसराम ॥८४
लखहु काल का जग करत सोवहु अब तुम नाहिं ।
अब कैसो आयो समय होत कहा जग माहिं ॥८५
बढ़न चहत आगे सबै जग की जेती जाति ।
बल बुधि धन विज्ञान में तुम कहँ अबहूँ राति ॥८६
लखहु एक कैसे सबै मुसलमान क्रिस्तान ।
हाय फूट इक हमहिं में कारन परत न जान ॥८७

बैर फूट ही सों भयो सब भारत को नास ।
तबहु न छाँड़त याहि सब बँधे मोह के फाँस ।८८
छोड़हु स्वारथ बात सब उठहु एक चित होय ।
मिलहु कमर कसि भ्रातगन पावहु सुख दुख खोय ।८९
बीती अब दुख की निसा देखहु भयो प्रभात ।
उठहु हाथ मुँह धोइ कै बाँधहु परिकर भ्रात ।९०
या दुख सों मरनो, भलो, धिग जीवन बिन मान ।
तासों सब मिलि अब करहु बेगहि ज्ञान बिधान ।९१
कोरी बातन काम कछु चलिहै नाहिन मीत ।
तासों उठि मिलि कै करहु बेग परस्पर प्रीत ।९२
परदेसी की बुद्धि अरु वस्तुन की करि आस ।
पर-बस ह्वै कब लौं कहो रहिहौ तुम ह्वै दास ।९३
काम खिताब किताब सों अब नहिं सरिहै मीत ।
तासों उठहु सिताब अब छाँड़ि सकल भय भीत ।९४
निज भाषा, निज धरम, निज मान करम ब्यौहार ।
सबै बढ़ावहु बेगि मिलि कहत पुकार पुकार ।९५
लखहु उदित पूरब भयो भारत-भानु प्रकास ।
उठहु खिलावहु हिय-कमल करहु तिमिर दुख नास ।९६
करहु बिलम्ब न भ्रात अब उठहु मिटावहु सूल ।
निज भाषा उन्नति करहु प्रथम जो सब को मूल ।९७
लहहु आर्य्य भ्राता सबै विद्या बल बुधि ज्ञान ।
मेटि परस्पर द्रोह मिलि होहु सबै गुन-खान ।९८

Scanned with CamScanner

भारत दुर्दशा

सन् १८७५ में छपा दुखान्त रूपक है, जिसे भारतेन्दु नाट्य रासक या लास्य रूपक कहते हैं।

— सं.

भारतदुर्दशा

(मंगलाचरण)

जय सतजुग-थापन-करन, नासन म्लेच्छ-आचार।
कठिन धार तरवार कर, कृष्ण कल्कि अवतार।।

पहिला अंक

स्थान — बीथी

(एक योगी गाता है)

(लावनी)

रोवहु सब मिलिके आवहु भारत भाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई।।ध्रुव।।

सबके पहिले जेहि ईश्वर धन बल दीनों।
सबके पहिले जेहि सभ्य विधाता कीनो।।
सबके पहिले जो रूप रंग रस भीनो।
सबके पहिले विद्याफल जिन गहि लीनों।।
अब सबके पीछे सोई परत लखाई।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई।।

Scanned with CamScanner

जहं भए शाक्य हरिचंदरु नहुष ययाती ।
जहं राम युधिष्ठिर बासुदेव सर्याती ।।
जहं भीम करन अर्जुन की छटा दिखाती ।
तहं रही मूढ़ता कलह अविद्या राती ।।
अब जहं देखहु तहं दुःखहिं दुःख दिखाई ।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई ।।
लरि बैदिक जैन डुबाई पुस्तक सारी ।
करि कलह बुलाई जवनसैन पुनि भारी ।।
तिन नासी बुधि बल बिद्या धन बहु बारी ।
छाई अब आलस कुमति कलह अँधियारी ।।
भए अंध पंगु सब दीन हीन बिलखाई ।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई ।
अँगरेजराज सुख साज सजे सब भारी ।
पै धन बिदेश चलि जात इहै अति ख्वारी ।
ताहू पै महँगी काल रोग बिस्तारी ।
दिन दिन दूने दुःख ईस देत हा हा री ।।
सबके ऊपर टिक्कस की आफत आई ।
हा हा! भारतदुर्दशा न देखी जाई ।

(पटोत्तोलन)

दूसरा अंक

स्थान— श्मशान, टूटे-फूटे मंदिर
कौआ, कुत्ता, स्यार घूमते हुए, अस्थि इधर-उधर पड़ी है ।

(भारत १ का प्रवेश)

भारत— हा ! यह वही भूमि है जहाँ साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णचंद्र के दूतत्व करने पर भी वीरोत्तम दुर्योधन ने कहा था, 'सूच्यग्रं नैव दास्यामि बिना युद्धेन केशव' और आज हम उसी को देखते हैं कि शमशान हो रही है । अरे यहां की

छायावादी कवियों की राष्ट्रीय, सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना की समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर:- छायावादी कवियों पर बहुत दिनों तक यह आरोप लगाया जाता कि जिस समय देश, औपनिवेशिक शक्तियों के विरूद्ध अपनी स्वाधीनता के संग्राम में संलग्न थे, छायावादी कवि राष्ट्रीय प्रश्नों से उदासीन होकर क्षितिज के पार ताक-झाँक करते रहे है। वस्तुत: यह छायावादी काव्य को एकांगी दृष्टि से देखने का परिणाम है। सर्वप्रथम नंनदुलारे वाजपेयी के इस मत का खंडन किया। तत्पश्चात सुधि समीक्षक डा. नामवरसिंह ने 'छायावाद' नामक पुस्तक लिखकर इन सारी भ्रान्तियों को दूर कर यह प्रमाणित किया कि छायावादी काव्य में जहाँ एक ओर राष्ट्रीय-बोध हैं वही उनकी कविताएँ सामाजिक सरोकार से युक्त हैं तथा सांस्कृतिक चेतना से लैस भी हैं। छायावादी कविता में राष्ट्रीयता की भावना को डा. नामवर सिंह ने अपनी पुस्तक में रेखांकित किया है " बुद्धिजीवी मध्य वर्ग के नेतृत्व में भरतीय जनता ने अपनी राजनीतिक और सामाजिक स्वाधीनता के लिए जो संघर्ष किया,

Scanned with CamScanner

...के गौरव का बोध सबसे अधिक था, वे ... निराला 'छत्रपति शिवाजी का पत्र' (1922) औरंगजेब के समर्थक जयसिंह के लिए, बल्कि अंग्रेज बहादुर के समर्थक आधुनिक जयसिंह हो के लिए है-

" एकीभूत शक्तियों से एक हो परिवार
फैले संवेदना
व्यक्ति का खिंचाव यदि जातिगत हो जाए,
देखो परिणाम फिर
स्थिर न रहेंगे पैर
पस्त हौसला होगा
ध्वस्त होगा साम्राज्य
-- - - - - - -
हिन्दुस्तान मुक्त होगा घोर अपमान से
दासता के पाश कर जाएँगे।"

'जागो फिर एक बार' कविता में निराला ने सांस्कृतिक परंपरा की दुहाई देकर आत्म-गौरव और उद्बोधन का भाव जगाया है -

" शेरों की मांद में
आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार''

देश प्रेम में छायावादी कवियों ने अतीत प्रेम तो दिखता है, किंतु इस सबका अर्थ अतीत का यथावत, पुनरुत्थान नहीं है। जातीय अथवा राष्ट्रीय भावना के इतिहास में यदि पुनरुत्थान भावना प्रथम चरण है तो देश-प्रेम द्वितीय चरण। अपने गाँव और प्रांत से बाहर निकलकर संपूर्ण देश को अपनी जन्मभूमि समझना राष्ट्रीयता का मंगलाचरण हैं। लेकिन सच्चे देश-प्रेम के लिए आवश्यक है अपने देश के पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, नदी-नाले, पहाड़-झरने, ग्राम-प्रांत तथा यहां के रहने वाले लोगों से घनिष्ठ परिचय तथा सहज स्नेह। इन सारी चीजों के प्रति छायावादी कवियों की कविताओं में अगाध प्रेम है।' देश-भक्ति- देश-भक्ति' चिल्लाने से देशभक्ति नहीं आती है। कवियों का देश- और प्रकृति प्रेम दृष्टव्य है -

नीलांबर परिधान हरित तट पर सुंदर है
सूर्य-चन्द्र, मुकुट मेखला रत्नाकर है।

उपर्युक्त प्रकृति परक देश प्रेम छायावादी कवियों के यहाँ सूक्ष्म, भावात्मक और व्यापक हो गया। चन्द्रगुप्त नाटक में कार्नेलिया के द्वारा गाए गीत इस के उदाहरण हैं-

अरुण यह मधुमय देश हमारा
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।

भावुक देश-प्रेम से भी आगे बढ़कर छायावादी कवियों ने देश की स्वतंत्रता के लिए उद्बोधन गीत लिखे-

"हिमाद्रि तुंग श्रृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती
स्वयंप्रभा समुज्जवला
स्वतंत्रता पुकारती।"

सामाजिक भावना :-

सामाजिक भावना का राष्ट्रीय भावना से अपना करके नहीं देखा जा सकता है। तथापि छायावादी कवियों की दृष्टि सामान्य सामाजिक समस्याओं की ओर भी गयी। निराला की 'अनामिका' में संकलित 'दान' कविता में दयालु ढोंगियों का पर्दाफाश किया गया है। 'भिक्षुक' कविता में भिखारी को सम्पूर्ण मानवीय संवेदना के साथ देखने की कोशिश की गई है।' वह 'तोड़ती पत्थर' में मजदूरिन की व्यथा-कथा है। छायावादी कवि जानना चाहता है कि इस गरीब ने आखिर क्या किया है, जो उसे यह पाप भोगना पड़ रहा है। वह इस सवाल का जवाब चाहता है, मगर जवाब इसका कौन दे-

ढोता जो वह, कौन सा शाप
भोगता कठिन, कौन सा पाप
यह प्रश्न सदा ही पथ पर
पर सदा मौन इसका उत्तर।

इस सामाजिक चेतना को सर्वप्रथम अत्यंत सुंदर

Scanned with CamScanner

ढ़ंग से व्यक्त किया नन्द दुलारे वाजपेयी जी ने। उनके शब्दों में - जिस प्रकार मध्य युग का जीवन भक्ति काव्य में व्यक्त हुआ, उसी प्रकार आधुनिक जीवन की अभिव्यक्ति इस काव्य में हो रही है।"

सांस्कृतिक चेतना

प्राचीन रूढ़ियों के विरूद्ध विद्रोह छायावादी कविता का प्रमुख सरोकार है। छायावाद की सांस्कृतिक चेतना द्विवेदी युग से अधिक परिमार्जित और सूक्ष्म थी। निराला की 'यमुना के प्रति', तुलसीदास ' राम की शक्तिपूजा', तथा प्रसाद की कामायनी से स्पष्ट है कि ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथानकों को ग्रहण करते हुए भी छायावादी कवियों ने उनका उपयोग केवल अतीत की पुनरावृति के लिए नहीं, अपितु उन्हें समकालीन आशयों और अर्थ-व्यंजनों से सम्पृक्त कर उनका पुनराविष्कार भी किया है। परिणामतः छायावाद के आधुनिक-बोध को एक नया सांस्कृतिक आयाम मिल गया।

Scanned with CamScanner

कामायनी का आधुनिक संदर्भ विश्लेषित कीजिए।

उत्तर:- 'कामायनी' में आधुनिकता की पड़ताल प्रसाद की विचारधारा में न कर सीधे उनकी कविता में करनी चाहिए। कामायनी के सारे आधुनिक संदर्भ, मसलन गाँधीवाद, यांत्रीकरण प्रकृति-पर्यावरण आदि की अपेक्षा प्रसाद ने सौन्दर्य दृष्टि में जो आधुनिकता का समावेश किया है, प्रशंसनीय है। गोल-कपोल और उन्नत वक्ष पर इतराने वाली रीतिकालीन मांसल नायिकाओं के बरक्स श्रद्धा का सौंदर्य आत्मा तक को छू जाता है। इस आधुनिक दिव्य सौन्दर्य-दृष्टि के आगे न जाने कितने आधुनिक दावे पिछड़ जायें।

Scanned with CamScanner

श्रद्धा के नील परिधान के बीच जो अधखुला अंग खुल रहा था, उसे देखकर ऐसा मालूम होता था, जैसे मेघों के वन में बिजली का फूल खिला हो। उसके मुख की कांति को देखकर ऐसा लगता था कि इंद्रनील के लघु श्रृंग को फोड़कर ज्वालामुखी धधक रहा है। और श्रद्धा की मोहिनी मुस्कान तो अद्‌भूत थी। वह मुस्कान क्या थी मानों रक्त किसलय पर अरूण की एक अलसाई हुई किंतु अम्लान किरण पड़ी हो, और संपूर्ण अंग-यष्टि जैसे -

"कुसुम कानन-अंचल में मंद
पवन-प्रेरित सौरभ साकार
रचित परमाणु पराग शरीर
खड़ा हो ले मधु का आधार।"

' कामायनी' में यद्यपि नारी को ' केवल' श्रद्धा कहकर उसकी व्यापकता ही नहीं बल्कि उसकी सहजता को भी प्रसाद ने कम कर दिया है तथापि नारी के प्रति उनकी आधुनिक दृष्टि की प्रशंसा करनी पड़ेगी।

अत्याधिक मशीनीकरण जहाँ एक ओर बेरोजगारों की लंबी फौज खड़ी कर दी है वहीं दूसरी ओर भौतिकवाद-बाजारवाद और भोगवाद को बढ़ावा दिया है। यही मशीनीकरण कुछ उँचे रूप में आज कम्प्यूटरीकरण के रूप में लोगों को 'वी. आर. एस. लेने के लिए बाध्य कर रहा है। प्रसाद उन दिनों की यांत्रीकरण की विसंगति को समझ ही नहीं रहे थे, बल्कि अपने तईं उससे लड़ भी रहे थे। विज्ञान द्वारा सुख-साधनों की वृद्धि के साथ-साथ विलासिता और लोभ की असीम वृद्धि तथा यंत्रों के परिचालन से जनता के बीच फैली हुई घोर अशक्तता, दरिद्रता आदि के कारण वर्तमान जगत की जो विषम स्थिति हो रही है उसका आभास मनु भी विद्रोही प्रजा के इन वचनों द्वारा दिया गया है-

"प्रकृति शक्ति तुमने यंत्रों से सबकी छीनी।
शोषण कर जीवनी बना दी जर्जर झीनी।।"

आज सम्पूर्ण विश्व के समक्ष पर्यावरण प्रदूषण एक गहरी चिंता का विषय है। प्रदूषण का मुख्य कारण है प्रकृति के प्रति प्रेम का अभाव और उसकी अवहेलना। डा0 मैनेजर पाण्डेय ने समकालीन कविता में प्रकृति की अनुपस्थिति को चिंता का विषय नहीं संकट का विषय कहा है। इस दृष्टि से छायावादी कविता को देखें तो हम पाते हैं कि ये कविगण प्रकृति के प्रति अत्यंत संवेदनशील थे। और लोगों में प्रकृति के प्रति संवदनशीलता को बढ़ाना चाहते थे। यहाँ से वहाँ तक 'कामायनी' में प्रकृति प्रेम बिखरा पड़ा है। कभी श्रद्धा के सौंदर्य-वर्णन के प्रसंग में -

" कुसुम कानन अचंल में मंद
पवन प्रेरित सौरभ साकार
रचित परमाणु पराग शरीर
खड़ा हो ले मधु का आधार
..... और उस पर पड़ती हो शुभ
नवल मधु शका मन की साध।"

जयशंकर प्रसाद ने युगानुरूप अपने समय की समसामयिक विभीषिकाओं के समाधान की ओर भी संकेत किया है। मनु की विडंबना वास्तव में आज के मानव की विडंबना है, जिसका कारण यह है कि आज हमारी भाव-वृति, ज्ञान-वृति (दर्शन-विज्ञान) और कर्म-वृति (राजनीतिद्ध तोनों पृथक-पृथक हैं, उनमें सामांजस्य नहीं है-

ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है
इच्छा क्यों पूरी हो मन की ।

इस विडंबना का अंत श्रद्धा अर्थात गाँधीजी के अहिंसा तथा पाश्चात्य दर्शन के मानवतावाद द्वारा ही हो सकता है। मानव भावना द्वारा ही संस्कृति, विज्ञान और राजनीति में सामंजस्य स्थापित हो सकता है, पूँजीवाद और विज्ञान से पीड़ित समाज की विडंबनाओं का समाधान हो सकता है।

इन सारी आधुनिकताओं के इतर प्रसाद के आधुनिक बोध की अपनी सीमाएँ हैं। वे मनु की प्रगतिशीलता

Scanned with CamScanner

को कर्म-जीवन में चिरतार्थ होते हुए नहीं दिखाते हैं बल्कि इसे काल्पनिक दार्शनिक समाधान देकर काल्पनिक आनंदवाद की भूमिका में ले जाते हैं। प्रश्न उठता है कि क्या ' कामायनी' में कही जाने वाली मानव-विकास-यात्रा की विसंगति पर उस समय के राजनीतिक यथार्थ की छाया है? मुक्तिबोध याद दिलाते हैं कि सामंती तत्वों ने सामाजिक-राजनीतिक धरातल पर साम्राज्यवाद से अटूट समझौता कर रखा था, फिर भी उच्च कुलोद्भव कुछ सामंती तत्व राष्ट्रवादी आंदोलन में भी आए और कांग्रेस के भीतर उन्होंने राष्ट्रीय पूंजीवाद से समझौता किया।

बहरलाल 'कामायनी ' की आधुनिकता इसी से प्रकट है कि वह 'बड़े जीवन चक्रों' की जटिल राष्ट्रीय सामाजिक समस्याओं के बीच अभिव्यक्ति का प्रयास है। ' कामायनी' एक अर्थ में सभ्यता समीक्षा का ही काव्यात्मक प्रयास है। मनु के अंतर्द्वंद्वों को लिए हुए, आंतरिक द्वंद्वों के भावचित्रों को संयोजित करते हुए प्रसाद ने इस कृति को आत्मपरक फंटेसी की तरह लिखा है। ' कामायनी' जिस अर्थ में सकर्मक जीवन अनुभव और अकर्मक जीवन अनुभव के बीच के तनाव को कलात्मक अभिव्यक्ति देती है, उसके पीछे आधुनिक-बोध और संवेदना की स्पष्ट भूमिका है। आधुनिक जीवन-दृष्टि के रूप में ' कामायनी' के दर्शन की कितनी भी सीमाएँ हों, कवि ने अनुभूतियों के चित्रण की एक नई कला अर्जित कर ली है।

Scanned with CamScanner

महादेवी के काव्य में रहस्यवाद का स्वरूप स्पष्ट कीजिए।

उत्तर:- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने रहस्यवाद को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''दर्शन शास्त्र में जो अद्वैतवाद है वही भावना या साहित्य के क्षेत्र में रहस्यवाद है। --- जहाँ कवि उस अनंत और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन बनाकर अत्यंत चित्रमयी भाषा में

Scanned with CamScanner

प्रेम को अनेक प्रकार से व्यंजना करता है।" तात्पर्य यह है कि रहस्यवाद में कवि कल्पना और भाव के मधुर प्रयत्न से निराकार को साकार बनाकर उसके साथ रागात्मक संबंध स्थापित करता है। ब्रह्मज्ञान तथा राग की तीव्रता से उत्पन्न विरह, मिलनाकांक्षा और आत्मसमर्पण की भावना को अपनी अनुभूतियों को चित्रमयी भाषा, रूपक तथा प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त करता है। महादेवी ने भी निराकार के बोध को भावात्मक दृष्टि की सूक्ष्म संवेदना तथा सुख-दुख के सौंदर्य की संगीनी के माध्यम से गीतिमय अभिव्यक्ति दी है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उनके काव्य में रहस्यवादी प्रवृत्ति स्पष्ट है।

जिस प्रकार किसी पथिक को अपने लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अनेक मंजिलें पार करनी पड़ती है, उसी प्रकार साधक आत्मा को साध्य तक पहुँचने के पूर्व अनेक स्थितियों से गुजरना पड़ता है, जिन्हें 'सोपान' कहते हैं। सूफी साहित्य में इन सोपानों का बड़ा विशद वर्णन है। ब्रह्म की सत्ता में आस्था रहस्यवाद का प्रथम सोपान है। इस आस्था के उपरांत उसके मन में उस परमतत्व के प्रति कुतूहल और बाद में जिज्ञासा का भाव उत्पन्न होता है। कनक से दिन और मोती-सी रात देखकर महादेवी का मन बार-बार प्रश्न करता है -

" मिटाता रंगता बारम्बार,
कौन यह जग का चित्राधार।" इस कौतूहल के बाद जिज्ञासा-भाव का आना स्वाभाविक है-

" तुम कौन मेरे हृदय में ?
कौन मेरी कसक में नित मधुरता भरता अलक्षित?"

तृतीय सोपान में कवियित्री अपना संबंध असीम सत्ता से जोड़ने लगती है। इन संबंधों में सबसे मधुर दाम्पत्य संबंध है। महादेवी नारी है, इसलिए उन्होंने यदि उसे 'प्रियतम' के रूप में ग्रहण किया तो स्वाभाविक ही था-

'प्रिय चिरंतन है सजनि
क्षण-क्षण नवीन सुहागिनी मैं।"

Scanned with CamScanner

चौथे सोपान में साधक अपने प्रिय के सौंदर्य का मूल्यांकन करने लगता है -

"तेरी आभा का काण मन को
देता अगणित दीपक दान
दिन को कनक राशि पहनाता
बिधु को चांदी का परिधान।

पाँचवें सोपान में साधक की आत्मा प्रियतम के विरह में व्याकुलता का अनुभव करती है। महादेवी का अधिकांश काव्य इसी विरह-वेदना से आप्लावित है। कभी वह प्रिय पथ में आँखें विछाए उसकी प्रतीक्षा करती है। कभी आँसू बहाती है, कभी प्रियतम द्वारा न पहचाने जाने पर विक्षेभ प्रकट करती है, कभी उसके आगमन का संकेत मुस्काते नभ में देख आशान्वित हो उठती है। महादेवी अपने प्रियतम को पत्र लिखना चाहती है-

"अली कहाँ सन्देश भेजूँ।?
मैं किसे संदेश भेजूँ?"

इस विरह की अवधि में बीच-बीच में उत्कंठा तथा प्रिय मिलन की तीव्र अभिलाषा भी उसे घेरती है -

" जो तुम आ जाते एक बार"

- में उत्कंठ की तीव्रता है तो -

" तुम्हें बांध पाती सपने में
तो चिर-जीवन प्यास बुझा
लेती उस छोटे क्षण अपने में"

- में अभिलाषा का निनाद गूँज रहा है। वह अपने प्रिय को लुभाने के लिए श्रृंगार भी करती है-

" शशि के दर्पण में देख-देख
मैंने सफलझाये तिमिर केश"

वह विरह में ही चिर हो जाती है और मिलन का तिरस्कार करती है -

मिलन का मत नाम ले मैं विरह में चिर हूँ।

प्रेम की अंतिम स्थिति मिलन है। रहस्यवाद में साधक का साध्य में लय होना ही मिलन होता है। यह बाह्य मिलन न होकर मानसिक मिलन होता है। इस मिलन के लिए वियोग की शत-शत ज्वाला मालाओं से अंगार-पंथों से आत्मसर्मपण करते हुए जान पड़ता है। महादेवी उन सब कष्टों को सहर्ष झेलती हैं और कभी-कभी मधु-मिलन का अवसर भी पा जाती हैं- यद्यपि वह उनका अभिप्राप्य नहीं है'-

तुम मुझमें में प्रिय फिर परिचय क्या?

इस प्रकार महादेवी के रहस्यवाद में साधक के साध्य तक पहुँचने के लगभग सभी सोपानों का चित्रण है। 'नीहार' में रहस्य भावना का अंकुर मात्र है, 'रश्मि' में उसे आकार मिला है, नीरजा में उसे मिलन-विरह का रूप दिया गया है। 'सान्ध्यगीत' में यह अनुभूति और भी तीव्र हो जाती है। वेदना के प्रति एक रागात्मक वृत्ति का प्रार्दुभाव होने से बड़ी सरसता और माधुर्य का संचार हो गया है। 'दीपाशिखा' उनकी रहस्य भावना का अंतिम सोपान है। इसमें मिलनाकांक्षा की तीव्रता के साथ आत्मविश्वास का दृढ़ भाव है, उत्साह का चरम उत्कर्ष है-

" पंथ होने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला!"

महादेवी वर्मा का रहस्यवाद आधुनिक रहस्यवाद है। वह मध्ययुगीन रहस्यवाद से भिन्न होते हुए भी उसकी कुछ विशिष्टताएँ अपने में समाहित किए हुए हैं। मध्ययुगीन रहस्यवादी अभिव्यक्ति के प्रभावों को ग्रहण करके छायावादी युग के अनुरूप नए प्रतीकों एवं बिंबों में ढालकर उन्होंने निराकार की खोज, उसके अभाव की पीड़ा को वाणी दी है। वह गोचर जगत की उपेक्षा नहीं करती, संसार को प्रिय मिलन में बाधक नहीं समझती। इनमें मध्ययुगीन साधकों की दीनता का भाव नही, अपितु आत्मविश्वास है, अपनी महत्ता की चेतना है। वे किसी सम्प्रदाय विशेष की अनुयायिनी नहीं, अत: उन्होंने सीधा आत्म निवेदन किया है। मध्ययुगीन संत और सूफी कवि दोनों मिलन की तीव्र उत्कंठा लिए हुए हैं, पर महादेवी बार-बार जन्म चाहती हैं ताकि प्रणय-मिलन चलता रहे, उनका व्यक्तित्व स्वतंत्र बना रहे। उनके काव्य में न धर्मोपदेश है न मत प्रचार और न हठयोग की

Scanned with CamScanner

क्रियाओं का शुष्क वर्णन। वह तो शुद्ध काव्य है। उसमें न पारिभाषिकता है न साम्प्रदायिकता। अतः उनकी रहस्यमयी अभिव्यक्ति को मध्ययुगीन रहस्यवादी भूमि पर रखकर देखना गलत है। उनकी काव्य-दृष्टि विश्व-चेतना से स्पंदित, लोक-मंगलोन्मुखी है, इसे हमें नहीं भूलना चाहिए। उसमें नये युग की सूक्ष्म सौंदर्यानुभूति और भावनाओं का परिष्कार है, विश्लेषण की नई प्रणाली है, अभिव्यक्ति में नयापन और ताजगी है।

Scanned with CamScanner